महाभारत की भाषा एवं शैली :-

महाभारत एक प्रौढ़ आकर ग्रन्थ है। इसकी भाषा शैली रामायण की भाँति ललित, मधुर, परिष्कृत व परिमार्जित तो नहीं है परन्तु प्रभावशाली और प्रवाहमयी है जो अहृदय को सहृदय, नीरस को सरस, अबोध को सुबोध, अज्ञ को विज्ञ, अकुशल को कुशल, अनीतिज्ञ को नीतिज्ञ, अव्यवहार पटु को व्यवहार पटु, पापात्मा को पुण्यात्मा और अन्ततः नर को नारायण बना देता है।

महाभारत की शैली 'पाञ्चाली' है। 'शब्दार्थयोः समो गुम्फः पाञ्चाली रीतिरिष्यते' इसमें शब्दों और अर्थों का सुन्दर समन्वय है। भाषा में सरलता, सरसता, रोचकता और प्रवाह है। भाव और रस के अनुसार भाषा का वैचित्र्य भी परिलक्षित होता है। यथा-

न च शत्रुरवज्ञेयो दुर्बलोऽपि बलीयसा।
अल्पोऽपि हि दहत्यग्निर्विषमल्पं हिनस्ति च॥

(शान्तिपर्व - 57-17)

कालो वा कारणं राज्ञो राजा वा कालकारणम् ।
इति मे संशयो मा भूद् राजा कालस्य कारणम् ।। (उद्योग
महाभारत में प्रमुख रूप से अनुष्टुप छन्द का प्रयोग किया गया है लेकिन इन्द्रवज्रा, उपजाति और वंशस्थ का प्रयोग भी यत्र तत्र मिलता है। इसमें प्रायः सभी रसों का प्रयोग है, परन्तु वीर, अद्भुत और शान्त रस प्रमुख है। शृंगार का प्रयोग कम और संयत भाषा में है। इसमें वीर रस अंगी है, अन्य रस अंग।

महाभारत में अलंकार के लिए अलंकारों का प्रयोग कहीं नहीं है। भाषा के प्रवाह में उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा अलंकारों का प्रयोग देखने को मिलता है। अनुप्रास और यमक के अनेक प्रयोग हैं। अर्थान्तर न्यास का तो यह भण्डार ही है। अनुप्रास का उदाहरण—
भीमो भीमपराक्रमः, अशोकः शोकनाशनः स तोय इव तोयदः। उपमा का प्रयोग जैसे—

पुष्पं पुष्पं विचिन्वीत मूलच्छेदं न कारयेत् ।
मालाकार इवारामे, न यथाऽङ्गारकारकः ।।
(उद्योगपर्व ३५-18)

चरित्र चित्रण में भी कवि ने कौशल दिखलाया है। एक ओर उद्धत और घमण्डी दुर्योधन है तो दूसरी ओर विनम्र और नीतिनिपुण युधिष्ठिर, एक तरफ अभिमन्यु जैसा पराक्रमी है तो दूसरी तरफ [redacted] अश्वत्थामा जैसा बाचाल, एक ओर विदुर जैसे

ज्ञानी और पवित्रात्मा हैं तो दूसरी तरफ शकुनि जैसे कुटिल, एक तरफ भीम जैसा शूरवीर है तो दूसरी तरफ जयद्रथ जैसा कायर।

महाभारत में नीतिशास्त्र, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीति शास्त्र, दर्शन, अध्यात्म, मनोविज्ञान और तत्वज्ञान के अर्थगौरव तथा अर्थान्तरन्यास के सहस्रों उदाहरण हैं। यथा- नीतिशास्त्र -

यस्मिन् यथा वर्तते यो मनुष्यः
तस्मिंस्तथा वर्तितव्यं स धर्मः।
मायाचारो मायया वर्तितव्यः
साध्वाचारः साधुना प्रत्युपेयः ॥ (उद्योग 37-7)

सुलभाः पुरुषाः राजन्, सततं प्रियवादिनः।
अप्रियस्य च पथ्यस्य, वक्ता श्रोता च दुर्लभः ॥
(उद्योग 37-15)

डॉ० ओम प्रकाश आर्य
महाराजा कॉलेज, आरा